THE ECONOMIC TIMES

Date: 14-10-16

Niti Aayog should aim for economy wide reform, not special zones

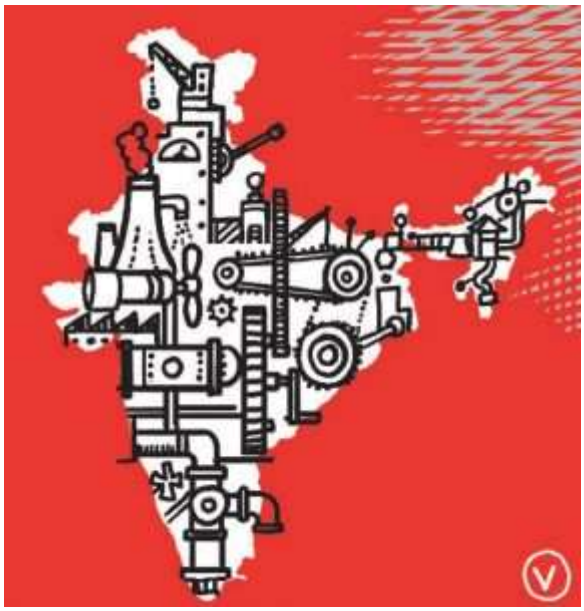

The Niti Aayog favours creating Shenzhen-style coastal economic zones (CEZs) in India, to host which, state governments would have to suitably reform land and labour laws, while the Centre bestows tax concessions. The goal to attract large manufacturing firms to serve the export market is laudable, but creation of special enclaves for the purpose with legal and tax regimes different from those for the rest of the country is not.

It ignores the experience of special economic zones (SEZs) and the new anti-globalisation climate in target export markets. SEZs did not take off on any large scale because they did not suit India's political economy.

Any whiff of special exploitation, using enclave-specific rules, of already cheap labour in a poor country would turn consumers against the products of large companies that take advantage of CEZ concessions. Some tax breaks/subsidies would pass muster at the WTO, but not all. Grafting a past Chinese success story on today's India will not deliver the same results. An operational framework is already in place for planned urbanisation, under the Delhi-Mumbai Industrial Corridor. The point is to stop dawdling on this project. Of course, fast-urbanising India needs new towns. The focus must be on innovative policies, such as the land-pooling experiment in Andhra's new capital under construction, to release agricultural land for urbanisation without creating conflict.

SEZs are part of a dilapidated culture of milking tax breaks. There is no reason why the entire country cannot have robust infrastructure, functional and speedy administration and sensible taxation. Labour laws and land utilisation norms have to change too. The focus should shift to creating economywide competencies to raise manufacturing's share in the economy

---

दैनिक भास्कर

Date: 14-10-16

समान नागरिक संहिता पर बहस से ही उभरेगी सहमति

ऑल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड ने समान नागरिक संहिता तथा तलाक के मुद्दे पर विधि आयोग का बहिष्कार करने का फैसला किया है। आयोग ने इस मुद्दे पर 16 बिंदुओं की प्रश्नावली जारी करके धार्मिकअल्पसंख्यक समूहों तथा - सरकारी संगठनों सहित समाज के सभी वर्गों से-गैर सुझाव मांगे हैं। मुख्य रूप से महिलाओं के अधिकारों को ध्यान में

रखते हुए ही संविधान के अनुच्छेद 44 के अनुरूप यह कदम उठाया गया है। पहल ऐसे समय हुई है जब मुस्लिम पसर्नल लॉ खासकर तीन बार कहकर तलाक देने का मुद्दा गरमाया हुआ है।

गौरतलब है कि तीस साल से भी अधिक समय से देश की शीर्ष अदालत इस अनुच्छेद के अनुरूप देश में समान नागरिक संहिता बनाने का सुझाव देती रही है, लेकिन विभिन्न सरकारें कोई कदम उठाने से कतराती रहीं। कोर्ट द्वारा जोर दिए जाने के बाद अब विधि आयोग ने यह कदम उठाया है। बोर्ड का आरोप है कि आयोग स्वतंत्र संस्था की बजाय सरकारी संस्था की तरह काम कर रहा है। उसने संविधान की दुहाई देते हुए कहा है कि देश में विभिन्न आस्थाओं के लोग एक करार के तहत रह रहे हैं और समान नागरिक संहिता इसका उल्लंघन है। भाजपा की दलील यह है कि पूरी प्रक्रिया सुप्रीम कोर्ट की निगरानी में हो रही है और विधि आयोग ने इस मामले की बहस में सभी संबंधित पक्षों को शामिल करने का प्रयत्न किया है। यह हमारी व्यवस्था का उजला पहलू है कि इस मसले पर दोनों पक्ष संविधान की दुहाई दे रहे हैं। यही हमारे संविधान की ताकत है, जिसमें मौजूदा विसंगतियों को समायोजित करते हुए नीति निर्देशक सिद्धांतों के तहत वांछित लक्ष्यों को भी स्पष्ट किया गया है और इन्हीं लक्ष्यों में लैंगिक समानता भी एक मुद्दा है। गौरतलब है कि तीन बार तलाक के मसले पर सुप्रीम कोर्ट में सरकार ने हलफनाम दायर किया है कि यह मुस्लिम महिलाओं के हकों के खिलाफ है।

मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड ने अपने हलफनामे में कहा कि सुधार के लिए पर्सनल लॉ का पुनर्लेखन नहीं किया जा सकता। दरअसल, सारी समस्या भरोसे की है। ऐसा लगता है कि भाजपा के पिछले इतिहास को देखते हुए बोर्ड को उसके इरादों पर संदेह है। किंतु बहिष्कार इसका कोई हल नहीं है। सभी पक्षों के बीच सार्थक संवाद से ही आपसी भरोसा भी कायम हो सकता है। मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड फैसले पर पुनर्विचार करे तो सार्थक बहस की गुंजाइश बढ़ेगी।

Date: 14-10-16

ब्रिक्स सम्मेलन | कल से गोवा में शुरू हो रही है शिखर वार्ता, पाक को अलग-थलग करेगा भारत

भारत रूस से खरीदेगा 200 हेलीकॉप्टर और 5 मिसाइलें, 40 हजार करोड़ रु. के होंगे रक्षा सौदे

} भारत में ही बनेंगे कामोव केए 226 टी हेलीकाप्टर, 40 रूस से आएंगेः रूसी मीडिया

एजेंसी | नई दिल्ली/मॉस्को

इस बार ब्रिक्स सम्मेलन गोवा में हो रहा है। यहां 15 और 16 अक्टूबर को ब्राजील, रूस, चीन, दक्षिण अफ्रीका और भारत के राष्ट्राध्यक्ष ब्रिक्स की प्रगति पर चर्चा करेंगे। आतंकवाद पर मुख्य फोकस होगा। रूसी मीडिया के मुताबिक इस बैठक से इतर रूस और भारत के बीच 6 बिलियन डॉलर (करीब 40 हजार करोड़ रुपए) के रक्षा सौदे होंगे। इसमें 200 'कामोव केए-226 टी चॉपर और पांच एस-400 मिसाइलें शामिल हैं। खास बात यह है कि समझौते के तहत कामोव हेलीकॉप्टर भारत में ही बनेंगे। फॉस्ट डिलीवरी के लिए 40 हेलीकॉप्टर रूस से आएंगे। मीडिया रिपोर्ट में कहा गया है कि पिछले साल दिसंबर में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के मॉस्को दौरे के समय इस पर सहमति बनी थी। अगर सौदा तय हो जाता है तो इससे प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के ड्रीम प्रोजेक्ट मेक इन इंडिया को बड़ा बूस्ट मिल सकता है।

रूस के रोसटेक कोऑपरेशन ने कहा है, वह भारत में 'कामोव केए 226 टी' हेलीकॉप्टर की मैन्यूफैक्चरिंग यूनिट लगाएगा। इसके तहत हिंदुस्तान एयरोनॉटिक्स लिमिटेड (एचएएल) के साथ ज्वाइंट वेंचर किया गया है। कोऑपरेशन के तहत 700 से ज्यादा रूसी फर्म हैं। ये सभी कंपनियां रक्षा और तकनीकी क्षेत्र से जुड़ी हुई है।

कामोव चॉपर व एस-400 मिसाइल- वो सबकुछ, जो आप जानना चाहते हैं...

- यह 8.6 मीटर लंबा, 3.2 मीटर चौड़ा और 4.1 मीटर ऊंचा है।
- छोटा होने से सीमित जगह में लैंड या टेक ऑफ की क्षमता।
- हेलीकॉप्टर में सात पैराट्रूपर की जगह है। ये 3500 किग्रा का सामान ले जा सकते हैं।

33 हजार करोड़ में 5 एस-400 मिसाइल खरीदेगा, 36 मिसाइलों को एक साथ गिरा देने की क्षमता

पांच एस-400 मिसाइल के सौदे पर भी बात हो सकती है। यह सौदा 5 बिलियन डॉलर यानी 33 हजार करोड़ में होने की संभावना है। इस डिफेंस सिस्टम में 400 किमी दूर से आ रहे टारगेट को ट्रैक करने की क्षमता है। एक वक्त में 36 मिसाइलों को टारगेट कर सकता है।

ये मिसाइलें एक तरह से मिसाइल शील्ड का भी काम करेंगी, जो पाकिस्तान या चीन की परमाणु शक्ति संपन्न बैलेस्टिक मिसाइलों से सुरक्षा प्रदान करेगी। अमेरिका के सबसे एडवांस फाइटर जेट एफ-35 को गिराने की भी क्षमता है। सौदा होता है तो चीन के बाद इस सिस्टम को खरीदने वाला भारत दूसरा देश होगा।

चीन से नाराजगी जताएंगे मोदी

ब्रिक्स सम्मेलन के दौरान ही पीएम मोदी की द्विपक्षीय मुलाकात चीन के राष्ट्रपति शी जिनपिंग से होनी है। इसमें मसूद अजहर जैसे आतंकी के खिलाफ कार्रवाई और एनएसजी में भारत की सदस्यता का मामला भी उठा सकते हैं। इसके अलावा पीएम मोदी रूस के राष्ट्रपति पुतिन से भी मिलेंगे। जिसमें रूस के साथ कुछ समय पहले रिश्तों में आई खटास को मिटाने की कोशिश होगी। उड़ी हमले के बाद रूस ने पाकिस्तान में सैन्य अभ्यास किया है। भारत अपने राजदूत के माध्यम से मास्को में गहरी नाराजगी जता चुका है।

दुनिया की 22% जीडीपी ब्रिक्स देशों के पास

दुनिया की 53% आबादी
ब्रिक्स के सभी देशों की जीडीपी करीब 160 खरब है। यानी दुनिया की 21 फीसदी। दुनिया की 53 फीसदी आबादी रहती है।

यूरोपीय समीकरण चुनौती
आरबीआई गवर्नर उर्जित पटेल ने कहा, अमेरिकी चुनाव व यूरोप में नए सियासी घटनाक्रम से ब्रिक्स देशों के सामने जोखिम की संभावना बढ़ी है।

5.1% रहेगी विकास दर
ब्रिक्स देशों की वृद्धि चालू वित्त वर्ष में 5.1 प्रतिशत रहेगी। जबिक वैश्विक स्तर पर 3.2 प्रतिशत वृद्धि के अनुमान से अधिक है।

भास्कर एक्सपर्ट

पाक प्रायोजित आतंक पर भारत को देना होगा स्पष्ट संदेश

रहीस सिंह, विदेश मामलों के विशेषज्ञ

▪ ब्रिक्स में भारत की कितनी अहमियत?

आबादी और इकोनॉमी के लिहाज से भारत इस ग्रुप का दूसरा सबसे अहम सदस्य है। इस वक्त रूस और ब्राजील आर्थिक संकट से जूझ रहे हैं। दक्षिण अफ्रीका और चीन की रफ्तार स्थिर है। इस नकारात्मक माहौल में भारत की जीडीपी 7.6 फीसदी से बढ़ने की उम्मीद है। साथ ही भारत में सबसे ज्यादा व्यापार की संभावना है। भारत के बिना ब्रिक्स की कल्पना नहीं की जा सकती है।

▪ भारत की तरफ से अहम एजेंडे क्या होंगे?

भारत का खासा जोर पाक प्रायोजित आतंकवाद पर होगा। भारत को सीमा पार के आतंकवाद पर ब्रिक्स देशों सदस्यों को सीधे बयान पर राजी करना होगा। हालांकि जैश ए मोहम्मद को आतंकी घोषित करने के भारत के प्रयास को चीन ने झटका दिया है। इस पर भारत को स्पष्ट रूप से बात करनी होगी। सीधे पाकिस्तान का नाम लेना होगा। चीन और रूस ने उइघर और चेचेन आतंकी पर कार्रवाई करने के लिए इस तरह के प्लेटफार्म का इस्तेमाल किया था। जरूरी है कि ब्रिक्स देश आतंक पर स्पष्ट नीति रखें।

▪ रूस-भारत के बीच दूरी क्यों दिख रही है?

यह सम्मेलन इसलिए भी महत्वपूर्ण माना जा रहा है, क्योंकि 2014 में नरेंद्र मोदी के सत्ता में आने के बाद भारत का अमेरिका और यूरोप की ओर हाथ बढ़ाने की कोशिश से ब्रिक्स का भविष्य अंधकार में नजर आ रहा था। इसके चलते रूस को भी लग रहा कि सोवियत संघ से चल दोनों देशों के रिश्ते कमजोर पड़ रहे हैं। हालांकि दोनों देशों के रिश्ते बिगड़े नहीं है। इन्हें बचाया जा सकता है।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 14-10-16

बढ़ी आबादी का फायदा छह राज्यों पर है जिम्मा

भारत को अगर जननांकीय लाभांश का पूरा लाभ हासिल करना है तो इसमें छह राज्यों की अहम भूमिका हो सकती है। इस संबंध में विस्तार से जानकारी दे रहे हैं शंकर आचार्य

रॉबर्ट माल्थस की प्रसिद्घ पुस्तक 'एन ऐसे ऑन द प्रिंसिपल ऑफ पॉप्युलेशन' का प्रकाशन सन 1798 में हुआ। इस पुस्तक में उनका मूल कथन यह था कि आबादी में होने वाली बढ़ोतरी उत्पादन खासतौर पर खाद्य उत्पादन में होने वाली वृद्घि को पार कर जाएगी और मनुष्य जाति को कमतर जीवन स्तर पर गुजारा करना होगा। आदमी भूख, अकाल और बीमारियों से ग्रस्त रहेगा। 19वीं सदी और 20वीं सदी के काफी वक्त तक माल्थस का यह सिद्घांत चर्चा में रहा। सन 1968 में आई पॉल एर्लिच की 'द पॉप्युलेशन बॉम्ब' की चेतावनी को इससे जोड़कर देख सकते हैं।

हकीकत में इन दोनों सदियों में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अप्रत्याशित प्रगति हुई। इनकी वजह से लोगों के जीवन स्तर में जबरदस्त सुधार हुआ। पहले आज के औद्योगीकृत देशों में और सन 1950 के बाद विकासशील देशों में इसकी शुरुआत हुई। बीसवीं सदी के आखिर तक तेज तकनीकी प्रगति ने माल्थस की चिंताओं को दूर कर दिया। वैश्विक अर्थव्यवस्था में एकीकरण तेज हुआ और जननांकीय बदलाव अपने साथ आर्थिक और सामाजिक बदलाव लेकर आए। आबादी को लेकर आधुनिक दृष्टिï यह है कि वह किसी देश की आर्थिक प्रगति के लिए एक अहम संपत्ति की तरह है। निश्चित तौर पर विकसित राष्ट्र अपनी जनसंख्या में आई स्थिरता को लेकर चिंतित होते हैं। उनके कामगारों की उम्र ढल रही है और सेवानिवृत्त लोगों का बोझ उन पर बढ़ रहा है। यह बात उनकी आर्थिक प्रगति में बाधा है। भारत में नव-माल्थसवादसे जुड़ी शुरुआती चिंताएं दूर होती दिखीं और नया नजरिया प्रभावी होने लगा। इक्कीसवीं सदी के शुरुआती सालों तक घरेलू और विदेशी अर्थशास्त्री देश की युवा श्रम शक्ति की बदौलत उसकी उभरती आर्थिक शक्ति के दावे कर रहे थे। यह वही जननांकीय लाभ था जिसका जिक्र हमें अक्सर सुनने को मिलता है। मैंने करीब 13 वर्ष पहले भी चेतावनी दी थी कि यह सारा उत्साह श्रम की आपूर्ति से जुड़ा हुआ है। जबकि मांग के बारे में कुछ भी नहीं कहा गया। अतिरिक्त श्रम आपूर्ति का संबंध रोजगार और वृद्घि की संभावनाओं से था। एक सुचालित अर्थव्यवस्था में जहां प्रतिस्पर्धी उत्पाद और कारक बाजार हों वहां श्रम की मांग आपूर्ति से मेल खाती है और अधिक रोजगार और उत्पादन होता है। लेकिन इस खुशनुमा नतीजे की गारंटी कम ही होती है।

जैसा कि हम जानते हैं, वर्ष 2003-04 और 2011-12 के बीच भारतीय अर्थव्यवस्था 8 फीसदी से अधिक की गति से विकसित हुई। लेकिन रोजगार की स्थिति में अनुरूप सुधार नहीं हुआ। खासतौर पर संगठित क्षेत्र का रोजगार कम ही बढ़ा। वह कुछ मानकों पर कुल रोजगार के 15 फीसदी के तो अन्य मानकों पर 10 फीसदी से भी कम रहा। वर्ष 2011-12 के बाद एक बार आर्थिक विकास दर में धीमापन आने के बाद के आंकड़े बताते हैं कि रोजगार की स्थिति और खराब हुई है। रोजगार के मोर्चे पर यह निराश करताआँकड़ा कई वजहों से था।

मसलन देश के अप्रत्याशित रूप से जटिल और सख्त श्रम कानून जिन्हें इंदिरा गांधी के शासनकाल में और सख्त किया गया था। शिक्षा और कौशल विकास नीतियां भी अधिकांश राज्यों में कमजोर थीं। मैंने अपने उस आलेख में यह भी कहा था कि देश के अलगअलग स्तर के चलते देश के जननांकीय लाभ का -अलग राज्यों में जननांकीय बदलाव के अलग- अधिकांश हिस्सा घनी आबादी वाले चुनिंदा गरीब और धीमे विकास वाले उत्तर भारतीय राज्यों तकसीमित रहेगा, जहां बुनियादी ढांचा, शिक्षा व्यवस्था और प्रशासन तीनों कमजोर हैं। श्रम की अतिरिक्त आपूर्ति की इस संभावना को रोजगार की हकीकत और तेज विकास में बदल पाने की संभावना मुझे तब भी क्षीण लगी थी। वास्तव में वर्ष 2013 तक उत्तर भारत के इन राज्यों में रोजगार के विकास की संभावना काफी अधिक थी लेकिन वह अंततकमजोर बनी रही। शायद : यही वजह है कि राजस्थान को छोड़कर इन सभी राज्यों में गरीबी दर काफी ऊंची

बनी रही।अब जबकि देश जननांकीय बदलाव का आधा सफर कर चुका है तो भविष्य की तस्वीर कैसी है? देश के 16 सर्वाधिक आबादी वाले राज्यों की बात करें तो सन 1990 से 2013 के बीच 23 साल में पहली बार इन राज्यों की प्रजनन दर कम हुई है। अगर हम 2.1 की दर को स्थिर आबादी की प्रतिस्थापन दर मानें तो कोई भी एक राज्य ऐसा नहीं था जो सन 1990 में मानक के करीब रहा हो। यहां तक कि तमिलनाडु और केरल में भी यह दर क्रमश :2.7 और 2.8 थी जबकि सबसे गरीब और आबादी वाले राज्यों उत्तर प्रदेश और बिहार में यह दर इसके दोगुना थी। वर्ष 2013 तक आधे राज्यों में प्रजनन दर प्रतिस्थापन दर से कम हो गई थी जबकि असम और गुजरात इसके बेहद करीब थे। बचे हुए छह राज्य जहां यह दर प्रतिस्थापन दर से काफी अधिक थी, वे वहीं राज्य हैं जिनको एक वक्त बीमारू राज्य कहा जाता था। यानी, बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान और उत्तर प्रदेश। अधिक चिंतित करने वाली बात यह थी कि वर्ष 2011 से 2026 के बीच आबादी में जो 19 करोड़ की बढ़ोतरी होनी है वह इन छह गरीब, उच्च प्रजनन दर वाले राज्यों में होगी जो कमजोर बुनियादी ढांचे, शिक्षा व्यवस्था और प्रशासन की समस्याओं से ग्रस्त हैं। वर्ष 2003 के तर्ज पर इस आबादी को श्रम शक्ति और उत्पादक रोजगार कार्यो में लगाने तथा वृद्धि में सहयोगी बनाने की चिंता बनी रहेगी। चार अहम वजहों से अब यह चिंता बहुत गहरी हो चली है। पहली, वैश्विक हालात के मद्देनजर वर्ष 2003-04 से लेकर 2011-12 के बीच की तेज विकास दर के अगले 15 सालों के दौरान दोहराए जाने की संभावना कम ही है। दूसरी, मौजूदा सरकार हालांकि श्रम आधारित विनिर्माण पर बहुत अधिक ध्यान दे रही है लेकिन उभरती अर्थव्यवस्था वाले देशों में श्रम बचाने की तकनीक लगातार मजबूत होने के कारण इनका फायदा मिलता नजर नहीं आ रहा है। रोबोटों का निर्माण, सस्ते सेंसर, इंटरनेट, 3डी प्रिंटिंग, कृत्रिम बुद्धिमता आदि इसके उदाहरण हैं।

तीसरी बात यह कि मौजूदा रोजगार को भी जोखिम पैदा हो गया है। विश्व बैंक के प्रमुख जिम यॉन्ग किम ने हाल ही में अपने भाषण में कहा कि विश्व बैंक के आंकड़ों पर आधारित शोध से पता चला है कि भारत में स्वचालन ने 69 प्रतिशत रोजगार को खतरा पैदा किया है। चौथी बात यह है कि ज्ञान आधारित श्रम बाजार में अनेक अध्ययनों ने इशारा किया है कि देश की शिक्षा और प्रशिक्षण की स्थिति खासी चिंताजनक है। कहा जा सकता है कि देश के हिंदी प्रदेशों के लिए माल्थस की चिंताएं कोई दूर की कौड़ी नहीं हैं।

The Indian EXPRESS
JOURNALISM OF COURAGE

Date: 13-10-16

Tread carefully

Personal law reform is desirable. But a consensual approach will be needed to take it forward.

The Centre filed an affidavit in the Supreme Court last week supporting Shayara Bano's plea against the practices of talaq-e-bidat (instantaneous triple talaq), nikah halala (prohibition on remarriage with the divorced husband without consumating marriage with another man) and polygamy. It referred to constitutional principles like gender equality and secularism, and cited international covenants, religious practices and marital law prevalent in various Islamic countries to emphasise that the practices need to be re-looked at by the court. Shayara Bano's petition challenges these practices as being violative of the fundamental rights guaranteed by the Constitution, particularly Articles 14, 15, 21 and 25, which are concerned with the right to equality, protection against discrimination on grounds of sex or religion, protection of life and personal liberty and freedom of religion respectively. A slew of progressive Muslims groups and secular bodies have also come out in support of Shayara Bano in the court.There is a strong case for reform of Muslim personal laws, but it needs to be pursued carefully and with the broad-based support of the community. In the Shayara Bano case, the Centre has held the view that the said practices are not an integral part of Islam. This could be taken to mean that they are subject to executive intervention. Yet, the way in which the debate has often been framed in the dominant narrative is disquieting, and stokes insecurity and fear in large sections of the minority community. Overlooking the vivid argument and disagreement even within Muslim groups on the subject of triple talaq, for instance, a neat opposition is painted between a conservative monolithic religion on the one hand and modern ideas of social and gender equality on the other. The conservatism espoused by sections of the clergy and the community has been held up as evidence of Muslim backwardness. The fact is, the call for reforms has periodically been raised from within the community, be it in the Shah Bano case in the 1980s or the Shayara Bano case now.Entrenched political interests tend to assume custodianship of community interests, feeding on real and imagined fears, and invite maximalist positions. Moreover, the pursuit of reform of Muslim personal laws has far too often been guided by the exigencies of electoral politics. In such a context, the onus of proving its good intentions is on the government. It needs to tread very carefully, while addressing the disquiet among sections of the Muslim community on a fraught question.

Date: 13-10-16

Double challenge

Contraction of bank loans to industry is related to demand for funds and bank NPAs. Both aspects must be addressed.

The legacy of bad loans, which the Narendra Modi government inherited when it came to office in May 2014, is now taking a toll, not just on Indian banks, especially state-owned, but also the broader economy. There can be no better indicator of this than the fact that outstanding loans of scheduled commercial banks to industry contracted by 0.2 per cent year-on-year in August — the first time in at least a decade. There is both a supply as well as demand side to this contraction. The demand for bank credit by industry has slowed mainly because not too many new projects, be it greenfield or even brownfield expansion, have taken off the ground. That, in turn,

is a reflection of significant underutilised capacities across most industries in conjunction with the pressure on prices, not least from imports. Both, together, have led to companies focusing more on improving utilisation of capacities — much of them created during the investment boom, 2004 to 2012 — rather than embarking on new projects requiring funding from banks. Even in the case of initial public offers made by companies in India during the current fiscal, three-fourths of the monies raised involved cashing out by existing shareholders rather than fresh capital being issued for undertaking project expansions.

But the problem is not just related to the demand for funds. Most banks today are weighed down by huge non-performing assets or NPAs from their past loans that have gone bad. The inability to recover at least part of these — including through sale of assets built up by highly leveraged borrowers — and having to make large provisions against losses from them has made banks wary of expanding their loan books. It looks like the resolution of the bad loan crisis will take much longer than what the government or even the RBI initially thought. Gross NPAs of banks rose to 8.7 per cent of their outstanding advances as on June this year. The RBI's latest Financial Stability Report has projected this to rise further by the end of the fiscal.

The RBI appears to be gauging both the supply and demand dimensions to the crisis. Earlier, it was focusing on the supply side, thinking that a clean-up of balance sheets by banks, while painful in the short-term, would set the stage for a resumption of lending activity. But the fact that high interest rates were also a problem, leading to lower credit demand as well as adding to the debt-servicing woes of firms, was not recognised adequately. It is now showing equal concern for growth — the latest 25 basis point cut in the repo rate is a pointer to that. That is a good sign.